बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 93

विविध चुनौतियां

आम चुनाव समाप्त हो चुके हैं और अब जुलाई में पेश होने वाले वर्ष 2019-20 के आम बजट पर ध्यान देने की आवश्यकता है। फरवरी में पेश किए गए अंतरिम बजट में पूरे वर्ष के राजस्व रुझान और व्यय को लेकर कुछ अनुमान प्रस्तुत किए गए थे। परंतु अब यह स्पष्ट है कि हालात कहीं अधिक खराब हो चुके हैं।

बीती तीन तिमाहियों में वृद्धि में जो धीमापन आया है वह राजस्व को प्रभावित कर सकता है। अंतरिम बजट में जो लक्ष्य तय किए गए थे वे इस परिदृश्य में महत्त्वाकांक्षी नजर आते हैं। अंतरिम बजट में कहा गया था कि कॉर्पोरेट टैक्स संग्रह 16 फीसदी से अधिक होगा और व्यक्तिगत आय कर संग्रह में इससे भी अधिक करीब 32 फीसदी का इजाफा होगा। केंद्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड ने लक्ष्य में कमी करने की मांग की है क्योंकि वृद्धि घट रही है। वस्तु एवं सेवा कर संग्रह का सीधा संबंध अर्थव्यवस्था की सेहत से है। अंतरिम बजट में उसमें 18 फीसदी की दर से इजाफा होने की आशा व्यक्त की गई थी। परंतु बीते कुछ महीनों को देखें तो जीएसटी प्राप्तियां निरंतर कमजोर बनी हुई हैं।

अगर राजस्व का लक्ष्य प्राप्त नहीं होता है तो बजट की वित्त व्यवस्था के गणित में भारी दिक्कत उत्पन्न हो सकती है। अगर बदलते हालात के मद्देनजर केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण अंतरिम बजट के कुछ अनुमानों पर नए सिरे से विचार नहीं करती हैं तो सवाल उठने लाजिमी हैं।

राजस्व के मोर्चे पर तंगी का अनुमान तमाम क्षेत्रों को प्रभावित करेगा। उदाहरण के लिए सरकार के पास वृद्धि को गति देने के लिए व्यय बढ़ाने की गुंजाइश बहुत सीमित रहेगी। अगर मंदी में रुकावट आती है तो भी ऐसा होना तय है। राजकोषीय समावेशन का मार्ग इस सरकार की प्रमुख प्रतिबद्धताओं में से एक रहा है। भले ही अप्रत्याशित लोकलुभावन व्यय के चलते इसमें एक या दो बार संशोधन करना पड़ा। भविष्य में इस मार्ग से किसी भी तरह का विचलन सरकार की वित्तीय समझदारी की अर्जित प्रतिष्ठा को क्षति पहुंचाएगा। सरकार ऐसी कीमत शायद ही चुकाना चाहेगी। इसके अतिरिक्त चूंकि वृद्धि में धीमेपन का संबंध निजी निवेश के संकट से भी है इसलिए सरकार को राजकोषीय घाटे या बढ़ते ऋण प्रोफाइल को लेकर किसी प्रकार की ढिलाई नहीं बरतनी चाहिए। अगर निजी निवेश बाहर होता है या इसके बहिर्गमन की गति बढ़ती है तो यह मौजूदा हालात में अर्थव्यवस्था पर बहुत भारी पड़ेगा।

यह भी स्पष्ट है कि वर्ष के बचे हुए महीनों में लोकलुभावन कदमों की कोई गुंजाइश नहीं है। सरकार पहले ही कुछ अतिरिक्त व्यय कर चुकी है। किसानों के लिए पीएम-किसान योजना का विस्तार किया जा चुका है। इसकी घोषणा चुनाव के पश्चात पहली कैबिनेट बैठक में किया जा चुका है। इस विस्तार के बाद पहले नियोजित 75,000 करोड़ रुपये की राशि के अलावा 12,000 करोड़ रुपये का अतिरिक्त बोझ पड़ेगा। ऐसे में नई वित्त मंत्री को विभिन्न मतदाता वर्ग के लिए रियायती घोषणाओं के आकर्षण से बचना होगा। बल्कि नया बजट उनके लिए कई चुनौतियां लेकर आएगा। उन्हें न केवल वृद्धि में नई जान फूंकनी होगी बल्कि साथ ही साथ राजकोषीय विवेक को भी बरकरार रखने होंगे।

घटते और तनावग्रस्त राजस्व के बावजूद सरकार को कंपनियों के आकार से परे सभी कंपनियों के लिए 25 फीसदी की निगमित कर दर तय करनी चाहिए। सीतारमण के लिए सबसे बेहतर यही होगा कि वह एक राजकोषीय विवेक संपन्न बजट प्रस्तुत करें जिसमें सुर्खियों और लोकलुभावन कदमों के लिए जगह नहीं हो।

अजय मोहंती

बैलेंस शीट सुधार में लगेगा कुछ वक्त

इस समय विभिन्न कंपनियों के प्रवर्तक नकदी के झटके सहन कर रहे हैं। इस संबंध में विस्तार से जानकारी प्रदान कर रहे हैं **आकाश प्रकाश**

भारत में बीते कुछ वर्ष के दौरान हमने देखा कि बड़े कारोबारी समूहों ने अपनी बैलेंस शीट में कर्ज कम करने पर बहुत जोर दिया। क्रेडिट सुइस की कुख्यात 'हाउस ऑफ डेट' रिपोर्ट में बताया गया है कि कैसे कई बड़ी भारतीय कंपनियों का पूंजी का ढांचा अस्थायित्व भरा है। उनके पास मुक्त नकदी प्रवाह नहीं है और उनको अपना कर्ज कम करने की आवश्यकता है। बीते छह से सात वर्ष में कंपनियों ने काफी कर्ज कम किया है। इसके लिए उन्होंने परिसंपत्तियों की बिक्री की है, बैंकों ने कुछ राशि बट्टे खाते में डाली और कुछ मामलों में कंपनियों का स्वामित्व बदला गया। बैंकिंग तंत्र (फंसे हुए कर्ज का अधिकतम स्तर 15 फीसदी) और अर्थव्यवस्था को इस कवायद का बोझ उठाना पड़ा है। ठीक उस समय जब लगा कि हम इस चक्र से बाहर निकल रहे हैं और निजी निवेश बढ़ाने की दिशा में बढ़ सकते हैं, हम एक बार फिर अत्यधिक ऋण के दौर में आ गए।

यह अत्यधिक नकदी और बैलेंस शीट में कर्ज कम करने की परिघटना अब प्रवर्तक स्तर पर होगी और उनकी व्यक्तिगत बैलेंस शीट में नजर आएगी। यह वह क्षेत्र है जहां इन दिनों बहुत अधिक तनाव है। यह ऋण बाजार को नुकसान पहुंचा सकता है और निजी निवेश में सुधार की संभावनाओं को भी क्षति पहुंचा सकता है। तमाम बैलेंस शीट में कर्ज कम करने का चक्र कर्ज के भुगतान से चलता है। इसका असर निवेश पर भी पड़ता है और अर्थव्यवस्था में मंदी आती है।

गत सितंबर माह में आईएलऐंडएफएस डिफॉल्ट के बाद चुनिंदा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) को छोड़कर सभी कंपनियां दबाव में हैं। लंबी अवधि के फंड तक उनकी पहुंच सीमित हुई है और फंडिंग की लागत में 100-200 आधार अंक की बढ़ोतरी हुई है। कई एनबीएफसी के पास कर्ज चुकता करने के लिए परिसंपत्तियां बेचने के अलावा कोई चारा नहीं रहा। कई के कर्ज देने की सीमा कम हो गई क्योंकि वे नया फंड जुटाने की स्थिति में नहीं हैं। ये एनबीएफसी प्रवर्तकों की फंडिंग और ढांचागत ऋण क्षेत्र की दिग्गज कंपनियां थीं। अब जब वे ऋण देने में सक्षम नहीं तो परिपक्व हो रही प्रवर्तक फंडिंग के ढांचे को आगे बढ़ाने को तैयार नहीं। ऐसे में प्रवर्तकों को अपनी जवाबदेही चुकता करने के लिए नकदी जुटाने के लिए मशक्कत करनी पड़ रही है। यह उन प्रवर्तकों के लिए झटका साबित हुआ जो अपनी जवाबदेही को आगे बढ़ाते आए थे।

प्रवर्तकों की फंडिंग का दूसरा जरिया है डेट म्युचुअल फंड। विभिन्न ढांचों के तहत हमने देखा है कि कई फंड विभिन्न प्रवर्तक होल्डिंग कंपनी को सबस्क्राइब करते हैं। ये प्रवर्तक के सूचीबद्ध कंपनी के शेयरों के संपार्श्व में काम करते हैं। अनुमान के मुताबिक ऐसी फंडिंग की राशि एक लाख करोड़ रुपये से अधिक है। इसलिए बाजार भयभीत हैं क्योंकि हमें नहीं पता कि प्रवर्तकों की यह फंडिंग किस स्थिति में है। हमें यह भी नहीं पता है कि बाजार को इसका सही अनुमान है या नहीं। डेट फंडों को आईएलऐंडएफएस के समक्ष अपनी जोखिम भरी राशि अवमूल्यन करना ही होगा। संभव है कि प्रवर्तक फंडिंग ढांचे के सामने आने पर ऐसा और अवमूल्यन देखने को मिले।

कई निवेशक शायद यह नहीं समझ पा रहे हैं कि कुछ फंड ने उनके लिए कितना जोखिम ले रखा है। यही कारण है कि कई डेट फंड अब ऋणमुक्ति का दबाव महसूस कर रहे हैं। नियामक भी शायद इस प्रकार के ऋण को लेकर अस्पष्ट है। यह कहना उचित होगा कि आगे चलकर डेट फंड ऐसे प्रवर्तक ढांचे में अपना जोखिम कम करेंगे। एक बार फिर प्रवर्तकों से कहा जा रहा है कि वे परिपक्वता ढांचे का पुनर्भुगतान करें क्योंकि रोल ओवर की सुविधा नहीं है।

प्रवर्तकों की फंडिंग का तीसरा स्रोत थी निजी कॉर्पोरेट बैंकों की ढांचागत ऋण पुस्तिका। इन बैंकों पर भी निवेशकों का काफी दबाव है कि वे ऐसे जोखिम को कम करें। ऐसा लगता नहीं कि फंडिंग का यह स्रोत जारी रहेगा। इस क्षेत्र की सबसे बड़ी कंपनी के समक्ष पूंजी और प्रबंधन की भारी चुनौती है। वह कारोबारी मॉडल बदलने और ऋण पुस्तिका को जोखिम रहित करने के लिए भी तत्पर नजर आती है।

प्रवर्तकों की बैलेंस शीट को नकदी की कमी का झटका लगा। अधिकांश कारोबारी परिवार अपने प्रवर्तकों की फंडिंग कम करने की जल्दबाजी में हैं तो केवल इसलिए क्योंकि वैकल्पिक फंडिंग स्रोतों का अभाव है। प्रवर्तकों की बैलेंस शीट में नकदी की कमी के कई अनचाहे परिणाम हैं।

पहली बात तो यह कि चुनिंदा मामलों में बाजार ने उन कंपनियों के शेयरों को नुकसान पहुंचाया जिनके शेयर गिरवी थे। कई अन्य मामलों में जहां गिरवी शेयर जोखिम में थे वहां शेयरों पर इतना गहरा असर हुआ कि डिफॉल्ट की घटनाओं की शुरुआत हुई और ऋण के बदले इन शेयरों की जबरिया बिक्री की शुरुआत हुई। जिन कंपनियों में परिचालन की कोई समस्या नहीं थी उनके शेयरों की कीमत इन गिरवी के कारण 50 से 60 फीसदी तक गिरी।

दूसरी बात, हमने ऐसे प्रयास देखे हैं जहां प्रवर्तक परिवारों ने व्यक्तिगत कर्ज कम करने के लिए नकदी जुटाने की खातिर शेयर बेचे हों। यह आम बात है और यह भी शेयरों पर दबाव डालती है।

तीसरी बात, व्यक्तिगत ऋण कम करने की जल्दबाजी में भी अनेक निवेशक परिसंपत्तियों की बिक्री करते हैं। अधिकांश मामलों में नकदी का इस्तेमाल बुनियादी कारोबार या व्यक्तिगत परिसंपत्ति बनाने में किया गया। एक बार फिर परिसंपत्तियों के लिए खरीद का बाजार नजर आया और अचल संपत्ति तथा बुनियादी क्षेत्र की तमाम परिसंपत्तियां विभिन्न प्रवर्तक परिवारों ने बिक्री के लिए प्रस्तुत कीं। बुनियादी क्षेत्र में जिस कदर संपत्ति नष्ट हुई है उसे देखते हुए यह बात सोचना भी अजीब है कि कोई निजी क्षेत्र से नए सिरे से निवेश की मांग कर सकता है।

जाहिर है इन तमाम बातों के बीच बैलेंस शीट में सुधार होने में वक्त लगेगा। इसके अलावा दोबारा जोखिम लेने की स्थिति बनने में भी वक्त लगेगा। ऐसे में वित्तीय क्षेत्र के बिचौलियों को सहज होने में समय लगेगा। देश के प्रवर्तकों में से अधिकांश के जल्दबाजी में निवेश करने की कोई संभावना नहीं है।

हम कमोबेश उसी स्थिति में हैं जहां हम सात वर्ष पहले थे। सरकार को अर्थव्यवस्था में निवेश को बढ़ावा देना होगा। इस बीच व्यवस्था में काम कर रही वित्तीय बिचौलिया कंपनियां नए सिरे से भरोसा कायम करने का प्रयास करेंगी। केवल यही आशा की जा सकती है कि यह प्रक्रिया तेजी से पूरी हो। हम अगले सात वर्ष तक एक अंक की वृद्धि दर पर निर्भर नहीं रह सकते। निजी क्षेत्र को तेजी से वापसी करनी होगी।

सरकार को मिला है बहुमत अपार विधिक क्षेत्र में लाएं जरूरी सुधार

अदालती आईना

एम जे एंटनी

नई सरकार बन चुकी है और देश इस बात की प्रतीक्षा में है कि डिजिटल इंडिया, सौर ऊर्जा और अंतरिक्ष उड़ान के क्षेत्र में किए गए सैकड़ों नए कदमों के वादे पूरे किए जाएंगे। इस बीच एक क्षेत्र जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है वह है न्यायपालिका का सम्मानित क्षेत्र। हाल के वर्षों में उच्च न्यायपालिका को काफी कठिनाई के दौर से गुजरना पड़ा। एक ओर जहां वित्त, दूरसंचार, ऊर्जा और अन्य क्षेत्रों में लॉबीइंग करने वालों की भरमार है, वहीं न्यायाधीशों के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए ऐसे लोग नहीं होते। उन्हें जो कुछ मिलता है उसी से संतुष्ट रहना पड़ता है और साथ ही उन्हें अपनी स्वायत्तता की रक्षा भी करनी होती है। इस सिलसिले में कई बार उनको खुलकर भी सामने आना पड़ता है।

वर्षों से इस क्षेत्र की एक प्रमुख शिकायत यह रही है कि लोकतंत्र के इस तीसरे स्तंभ को बजट में भी उसका पर्याप्त हिस्सा नहीं मिल पा रहा है। इस अहम क्षेत्र के लिए बजट में औसतन 0.2 फीसदी का प्रावधान है। आगामी बजट में इसे बढ़ाकर सम्मानजनक स्तर तक पहुंचाया जाना चाहिए। न्यायाधीश अपने निर्णयों में और सार्वजनिक रूप से भी न्यायालयों के बुनियादी ढांचे पर खेद जता चुके हैं लेकिन सरकारों ने इस पर शायद ही कभी ध्यान दिया हो।

अगली गंभीर समस्या है न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच निरंतर असहजता। सभी स्तरों पर न्यायाधीशों की नियुक्ति में देरी होती रही है। हालांकि अब सर्वोच्च न्यायालय में पूरे 31 न्यायाधीश हैं। हाल के कई दशकों में पहली बार ऐसा हुआ है। परंतु उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों में हालत अब भी बुरी है। न्यायाधीशों की नियुक्ति और उनके स्थानांतरण के तरीके को लेकर भी कोई सहमति नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित कॉलेजियम व्यवस्था पर इस पेशे के ही ढेर सारे लोगों का यकीन नहीं है। प्रस्तावित प्रक्रिया ज्ञापन, जिसे अभी न्यायपालिका और कार्यपालिका की मंजूरी की जरूरत है, उसे जल्द से जल्द अंतिम रूप देकर न्यायपालिका और सरकार के बीच टकराव की आशंका को समाप्त किया जाना चाहिए।

बीते दशकों में सर्वोच्च न्यायालय के कामकाज की समीक्षा के बाद उसके अधिकारों पर दोबारा नजर डालने की आवश्यकता है। हमारे पुरखों ने सर्वोच्च न्यायालय की परिकल्पना एक संवैधानिक अदालत के रूप में की थी लेकिन यह एक अपील अदालत बनकर रह गई। बीते तीन महीनों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अनेक निर्णय संपत्ति के बंटवारे, किराये के विवाद और सेवा संबंधी मसलों से जुड़े रहे हैं। वर्षों से लंबित इन मामलों के निपटारे में व्यस्त न्यायाधीशों के पास सैकड़ों पुराने संवैधानिक मसलों पर नजर डालने का वक्त ही नहीं है। हर सप्ताह बहुत बड़ी तादाद में अपील के नए मामले देश की सबसे बड़ी अदालत के समक्ष आ जाते हैं। अक्सर उच्च न्यायालयों और पंचाटों के निर्णयों के खिलाफ विशेष अवकाश याचिकाएं दायर की जाती हैं जो न्यायाधीशों का ढेर सारा समय ले लेती हैं। ऐसे में संवैधानिक अदालत की लंबे समय से लंबित मांग को पूरा किया जाना चाहिए, भले ही इसके लिए कानून में जरूरी बदलाव करना पड़े।

> बीते दशकों में सर्वोच्च न्यायालय के कामकाज की समीक्षा के बाद उसके अधिकारों पर दोबारा नजर डालने की आवश्यकता है। हमारे पुरखों ने सर्वोच्च न्यायालय की परिकल्पना एक संवैधानिक अदालत के रूप में की थी लेकिन यह एक अपील अदालत बनकर रह गई

सर्वोच्च न्यायालय में हाल में जो घटनाएं घटीं, उन्हें देखते हुए न्यायाधीशों पर लगे आरोपों से निपटने के लिए एक व्यावहारिक प्रक्रिया की आवश्यकता है। महाभियोग अव्यावहारिक साबित हुआ है। ऐसे में इस प्रकार की परिस्थितियों से निपटने के लिए एक विधिक प्रक्रिया स्थापित की जानी चाहिए। देश के प्रधान न्यायाधीश रंजन गोगोई ने चेतावनी दी है कि अगर न्यायाधीशों को गलत आरोपों का सामना करते रहना होगा तो अच्छे न्यायाधीश मिल पाना मुश्किल होता जाएगा।

कारोबारी सुगमता के कानूनी पहलुओं में से एक है मध्यस्थता। परंतु मध्यस्थता का प्रावधान भी विवाद वाले पक्षकारों को आकर्षित करने में कामयाब नहीं हो सका। अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता अब अमूमन विदेशी केंद्रों तक जाती है। घरेलू मध्यस्थता बीते कई वर्ष से प्रक्रियात्मक उलझनों में पड़ी हुई है। नई दिल्ली को मध्यस्थता के मामलों का केंद्र बनाने संबंधी एक अध्यादेश फिलहाल दिल्ली उच्च न्यायालय में चुनौती का सामना कर रहा है। ऐसे में जरूरत इस बात की है कि मजबूत संस्थानों की सहायता से इस प्रक्रिया को तेज किया जाए और वैकल्पिक विवाद निस्तारण प्रणाली को पेशेवर बनाया जाए।

कई ऐसे पंचाट हैं जो आर्थिक मसलों से संबंधित हैं। उनमें से कई में जरूरत से काफी कम सदस्य हैं। उनमें से कुछ में तो अध्यक्ष तक नहीं हैं। ऐसे में इन अर्द्ध न्यायिक संस्थानों में नियुक्तियों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। राष्ट्रीय कंपनी लॉ पंचाट और उसकी अपील संस्था सक्रिया हैं लेकिन उनके समक्ष लंबित 12,000 से अधिक मामलों में से आधे से अधिक अभी प्रतीक्षारत हैं। विलय एवं एकीकरण के मामलों को लेकर हो रहे विवादों के मद्देनजर प्रतिस्पर्धा कानून पर भी दोबारा दृष्टि डालने की आवश्यकता है।

यह प्रक्रिया लंबी है। बहरहाल, सत्ताधारी दल ने जो भारी भरकम जीत हासिल की है, उसका फायदा विधिक सुधारों के क्षेत्र में भी उठाया जाना चाहिए। इसकी बहुत लंबे समय से अनदेखी की जा रही है।

कानाफूसी

तृणमूल की समस्या

लोकसभा चुनाव परिणाम आने के बाद कांग्रेस ने अपने प्रवक्ताओं को टेलीविजन चैनलों में भेजना बंद कर दिया है। उधर तृणमूल कांग्रेस एक अलग तरह की समस्या से जूझ रही है। उसकी समस्या यह है कि अक्सर टीवी चैनल ऐसे लोगों को पार्टी का पक्ष रखने के लिए बुला लेते हैं जो औपचारिक रूप से पार्टी से जुड़े हुए हैं ही नहीं। सोमवार को तृणमूल कांग्रेस ने जानकारी दी कि उसके छह राष्ट्रीय प्रवक्ता- डेरेक ओब्रायन, सुदीप बंद्योपाध्याय, सुगात रॉय, काकोली घोष दस्तीदार, महुआ मोइत्रा और दिनेश त्रिवेदी ही टीवी चैनलों पर उसका पक्ष रखने के लिए अधिकृत हैं। ओब्रायन ने कहा कि हमने देखा है कि कुछ चैनल ऐसे मेहमानों को तृणमूल समर्थक के रूप में अपने स्टूडियो में बुला रहे हैं जो पार्टी की ओर से बात करने के लिए अधिकृत नहीं हैं। अगर चैनल इन लोगों को बुलाना जारी रखते हैं तो कृपया उन्हें तृणमूल समर्थक न कहें या उनके साथ किसी भी प्रकार तृणमूल का नाम न जोड़ें।

स्थानांतरण-प्रतिनियुक्ति उद्योग

मध्य प्रदेश में कमलनाथ के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार नियमित अंतराल पर अधिकारियों के स्थानांतरण करने के कारण सुर्खियों में है। स्थानांतरण और प्रतिनियुक्ति का काम इतने बड़े पैमाने पर किया जा रहा है कि मुख्य विपक्षी दल भारतीय जनता पार्टी के सदस्यों ने कहना शुरू कर दिया है कि कांग्रेस सरकार तबादला उद्योग चला रही है। तकरीबन साढ़े पांच महीने के कार्यकाल में कांग्रेस सरकार ने 450 से अधिक बार आईएएस और आईपीएस अधिकारियों का तबादला किया है। अगर निचले पदों के अधिकारियों को भी शामिल कर दें तो यह तादाद 15,000 का आंकड़ा पार कर जाएगी। भाजपा ने हालिया लोकसभा चुनाव में इसे मुद्दा बनाया था। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी भी चुनाव प्रचार के दौरान बार-बार मध्य प्रदेश के तबादला उद्योग का उल्लेख करते थे। उन्होंने आयकर विभाग द्वारा 281 करोड़ रुपये की बरामदगी के बाद इस राशि के तबादलों से जुड़े होने का इशारा भी किया था।

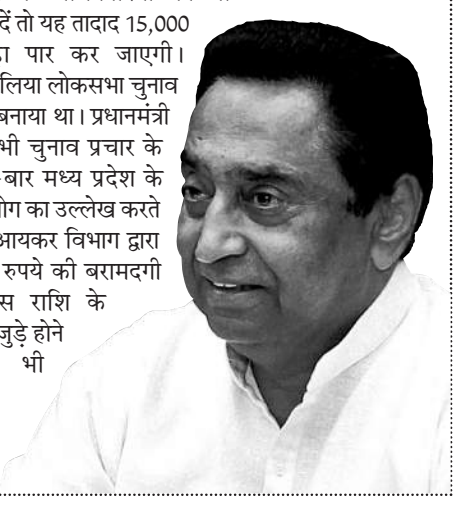

आपका पक्ष

तीसरी दुनिया के देशों में कई समस्याएं

दुनिया में पर्यावरणीय बदलाव किस तरह से हो रहा है इसका अंदाजा इन दिनों भारत के कई राज्यों में पीने योग्य साफ पानी की कमी से लगाया जा सकता है। भीषण गर्मी में लोग पानी की किल्लत से जूझ रहे हैं। लोग पानी के स्रोत जैसे सूख रही नदियां, दम तोड़ रहे नलकूप-हैंडपंप, सूखने के कगार पर पहुंचे कुएं के भरोसे इस उम्मीद में दिन गुजार रहे हैं कि जल्द ही बारिश होगी और पानी की समस्या दूर हो जाएगी। दुनिया 21वीं सदी के कालखंड से गुजर रहा है। कई तकनीकी और अहम बदलावों ने पृथ्वी के सभी जीव-जंतुओं के जीवन को प्रभावित किया है। तकनीक और बदलावों के दौर में हम पतन के कगार पर तो नहीं पहुंच गए हैं। अगर विकसित देशों को छोड़ दें तो आज भी एशिया, अफ्रीका और अन्य तीसरी दुनिया के देश के लोग मूलभूत सुविधाओं से वंचित है।

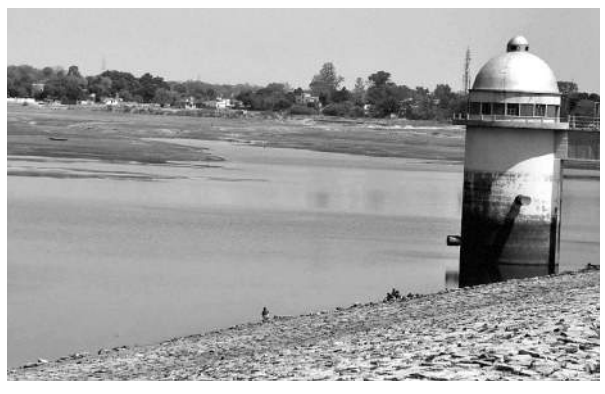

यहां साफ हवा, पानी, भोजन, शिक्षा, अस्पताल और रोजगार से जुड़ी समस्याएं इस दौर में विकराल रूप में दीवार की तरह खड़ी हैं। सवाल यह उठना लाजमी है कि आखिर सुविधाओं और संसाधनों का ध्रुवीकरण और इनपर कुछ देशों का एकाधिकार क्यों हैं। क्या यही वैश्विक गांव की खुशहाली और शांति का प्रतीक है। काफी साल बीत जाने के बाद सैकड़ों देश पर्यावरण, पानी, शिक्षा, अस्पताल और रोजगार के संकट से जूझ रहे हैं। आखिर कब तक तीसरी दुनिया के देशों को मूलभूत सुविधाओं के अभाव में जीना पड़ेगा। तीसरी दुनिया के देशों की यह समस्या क्या विकसित देशों के माथे पर कलंक नहीं है।

> **विकासशील देशों में आज भी पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि सुविधाओं का अभाव है**

पवन कुमार मौर्य, नई दिल्ली

नई सरकार के समक्ष कई चुनौतियां

विकसित देशों की तरह हमें भी सतत विकास पर वैसी जागरूकता तथा प्रगति करनी है जैसी स्वच्छता पर की जा रही है। नई सरकार को और जनसाधारण को मिलकर ऐसी नीति बनानी होगी जो इस बेहतर अर्थव्यवस्था को अपेक्षित गति दे सके। भारत की तुलना इस मामले में समृद्ध देशों से करना उचित नहीं होगा क्योंकि भारत में परिस्थितियां अलग है। भारत की शैक्षणिक गुणवत्ता काफी बेहतर नहीं है। यहां प्रदूषण नियंत्रण, जल प्रबंधन और जैव विविधता इन तीन बातों पर सारी ताकत लगा दें तो परिणाम दिखने लगेगा। देश में सौर संयंत्र का विनिर्माण अगर बड़े पैमाने पर होने लगे तो काफी बेहतर होगा। जल का पुनर्चक्रण और नदी जल विवादों का निपटान ही भारत के लिए बड़ी चुनौती है। वर्तमान में नदी जोड़ने का कार्य लगभग ठंडे बस्ते में है। राजधानी दिल्ली में हुई प्रदूषण की अति ने प्रशासन को फौरी तौर पर उपाय करने के लिए मजबूर कर दिया जबकि दीर्घकालीन, सघन, एकीकृत उपाय बेहद जरूरी है जिससे दूसरे महानगर उस संकट के शिकार न हों। राष्ट्रीय स्तर के उद्योग संगठन अपनी नियमित बैठकें, परिचर्चाओं एवं कार्यशालाओं में अपनी इकाइयों में हरियाली बढ़ाने को कार्यसूची में शामिल करे। यह विषय निगमित सामाजिक दायित्व (सीएसआर) से कम महत्त्व का नहीं है।

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।